इकाई 8 औपनिवेशिक युग में राज्य - निर्माण की गत्यात्मकता

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 औपनिवेशिक राज्य की स्थापना

8.2.1 औद्योगिक क्रान्ति का आरम्भ

8.2.2 एशिया में औपनिवेशिक राज्य

8.2.3 अफ्रीका में उपनिवेशवाद और इसके लिए संघर्ष

8.2.4 लैटिन अमेरिका में औपनिवेशिक राज्य

8.3 औपनिवेशिक राज्य की विशेषताएँ तथा उसके कार्य

8.4 उपनिवेशवाद के प्रतिमान, या नमूने

8.4.1 ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति

8.4.2 फ्रांसीसी उपनिवेशवाद

8.4.3 पुर्तगाली उपनिवेशवाद

8.4.4 बेल्जियम की औपनिवेशिक नीति

8.5 सारांश

8.6 शब्दावली

8.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य आपको उन कारणों से अवगत करवाना है जो एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के विभिन्न देशों में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना के लिए उत्तरदायी थे। आप इन के विभिन्न रूपों, विशेषताओं तथा कार्यों का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, आपः

- यह बता सकेंगे कि औपनिवेशिक राज्य की स्थापना कब और कहाँ हुई;
- औपनिवेशिक राज्य की विशेषताओं और उसके कार्यों का वर्णन कर सकेंगे; तथा
- विभिन्न औपनिवेशिक प्रतिमानों का पुनः स्मरण कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

औपनिवेशिक राज्य शासन व्यवस्था की वह संरचना थी जिसकी स्थापना यूरोपीय देशों ने, पन्द्रहवीं से उन्नीसवीं शताब्दियों के मध्य, ग़ैर-यूरोपीय विश्व के बड़े भाग को जीत कर की

थी। इसका उद्देश्य औपनिवेशिक शक्तियों के आर्थिक और राजनीतिक हितों की सुरक्षा करना, तथा उपनिवेशों के मूल निवासियों को पराधीन बनाकर रखना था। वे बहुधा इस कार्य के लिए बल प्रयोग किया करते थे। विभिन्न यूरोपीय देशों ने अपने उपनिवेशों की स्थापना के लिए विभिन्न उपाय अपनाए थे। अंग्रेज़ों, फ्रांसीसियों, पुर्तगालियों तथा बेल्जियम लोगों द्वारा अपना गए तरीके एक समान नहीं थे। उन्होंने जो कार्य किए वे प्रायः उपनिवेशों की जनता के हितों के विरुद्ध थे। इस इकाई में आप औपनिवेशिक राज्य के विभिन्न प्रतिमानों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

8.2 औपनिवेशिक राज्य की स्थापना

पन्द्रहवीं शताब्दी से आरम्भ होकर आधुनिक उपनिवेशवाद अनेक चरणों से गुज़रा है। औपचारिक रूप से उपनिवेशों और औपनिवेशिक राज्य की स्थापना तो, काफ़ी आगे चलकर, उन्नीसवीं शताब्दी में हुई, तथा यह विश्व पूँजीवादी व्यवस्था की उपज थी। अच्छे ज़हाज़ों के निर्माण के साथ पन्द्रहवीं शताब्दी में लम्बी समुद्री यात्राएँ सम्भव हो सकीं। इसने पहले पुर्तगाल एवं स्पेन को, तथा बाद में ब्रिटेन और फ्रांस को एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के देशों पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। यह आक्रमण और विजय का आरम्भिक युग था जब लूट और डकैती के द्वारा यूरोपीय देशों ने सम्पत्ति एकत्र की, तथा लूटे हुए धन को अपने लाभ के लिए आपस में विभाजित किया। परन्तु इस समय उपनिवेशों की औपचारिक स्थापना नहीं हुई। आगे चलकर, लैटिन अमेरिका की चांदी खानों से, सुदूर पूर्व में मसालों के व्यापार से, तंथा अफ्रीका में दासों के क्रय विक्रय से यूरोपीय देशों ने धन इकट्ठा किया। इस धन (पूँजी) को औद्योगिक क्रान्ति की सफलता के लिए प्रयुक्त किया गया। इसके पश्चात्, अगले युग में साधारण विजय और यूरोपीय देशों में पारस्परिक औपनिवेशिक प्रतिस्पर्द्धा का स्थान व्यापार और वाणिज्य-सम्बन्धी प्रतिस्पर्द्धा ने ले लिया। यह प्रतिस्पर्द्धा संसार भर में महत्वपूर्ण हो गई। इसका एक उत्तम उदाहरण ब्रिटेन और फ्रांस के मध्य भारतीय उप-महाद्वीप पर वर्चस्व के लिए स्पर्द्धा। इस संघर्ष के परिणामस्वरूप, अंग्रेज़ों ने अंततः फ्रांस को बाहर खदेड़ दिया, तथा भारत में अपने औपनिवेशिक राज्य की स्थापना कर ली।

8.2.1 औद्योगिक क्रान्ति का आरम्भ

अठाहरवीं शताब्दी के मध्य में ब्रिटेन में औद्योगिक क्रान्ति का आरम्भ हुआ, तथा उसके कुछ समय बाद महाद्वीपीय यूरोप में इस क्रान्ति का विस्तार हुआ। इसने शेष विश्व के साथ यूरोप के सम्बन्धों को परिवर्तित कर दिया। साथ ही इसने औपनिवेशिक राज्य की स्थापना को आवश्यक बना दिया ताकि यूरोप के औद्योगिक देशों के हितों की समुचित रक्षा हो सके। यूरोप के देश, जहाँ तेज़ी से औद्योगिक विकास हो रहा था, उन्हें बहुत बड़ी मात्रा में कपास, रबड़ तथा ताड़ का तेल जैसे कच्चे माल की आवश्यकता थी ताकि उनके कारखानों में मशीनों से बने सामान का उत्पादन हो सके। यह तथा अन्य कच्चा माल या तो उपनिवेशों में उपलब्ध था, या फिर वह उनके बाग़ानों में आसानी से उपजाया जा सकता था। अधिकांश उपनिवेश विश्व के कटिबंधीय प्रदेशों में स्थित थे। इस आवश्यकता ने यूरोपीय देशों में आपसी स्पर्द्धा को जन्म दिया ताकि वे उपनिवेशों को अपने नियन्त्रण में ले सकें। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में बढ़ते पूँजीपति वर्ग को बाहरी बाज़ारों की आवश्यकता का अनुभव भी हुआ, ताकि वहाँ उनके उत्पादित माल को बेचा जा सकता। उनके अपने घरेलू बाज़ारों में और अधिक खपत की गुंजायश नहीं रह गई थी। अतः

मुनाफ़ा कमा सकने योग्य बाज़ार तलाश करने थे, ताकि उनके कारख़ानों में उत्पादन बंद न करना पड़े। इसलिए यह आवश्यक हो गया था कि ऐसे बाज़ार उपलब्ध हों जिन पर यूरोपीय शक्तियों का कड़ा नियन्त्रण हो, और जहाँ बिना अन्य देशों के उत्पाद के साथ मुक़ाबले के वे अपना सामान खुलकर बेच सकें। एक तीसरी आवश्यकता इस बात की भी थी कि पूँजीवादी उत्पाद व्यवस्था में जो अतिरिक्त पूँजी संचित हो रही थी उसका भी निवेश किया जा सके। यह अनुभव किया गया कि एकाधिकारी व्यवस्था के साधन अपनाकर अपने नियन्त्रण वाले उपनिवेशों में लगाई गई पूँजी से काफ़ी लाभ हो सकता था। यद्यपि मुख्य प्रेरणा आर्थिक थी, तथापि यूरोपीय राष्ट्रवाद का उदय एक अतिरिक्त राजनीतिक कारक बना। मुक़ाबले की भावना, जर्मनी के तथा इटली के एकीकरण और फ्रांस की 1871 की पराजय से और भी तीव्र हो गई थी। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न यूरोपीय देशों ने एशिया और अफ्रीका के विशाल प्रदेशों को अपने नियन्त्रण में ले लिया। उन्होंने औपचारिक रूप से राजनीतिक वर्चस्व के द्वारा औपनिवेशिक राज्य की स्थापना कर डाली। यह औपनिवेशिक राज्य आगे चलकर विशाल यूरोपीय साम्राज्यों का अंग बन गए, जैसे कि भारत को ब्रिटिश साम्राज्य का अंग बना लिया गया था।

8.2.2 एशिया में औपनिवेशिक राज्य

संसार के विभिन्न भागों में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना किसी एक प्रकार से नहीं हुई थी। इस उपभाग में हम देखेंगे कि एशिया में यह किस प्रकार हुई। एशिया में, कई बड़े क्षेत्र पहले ही किसी न किसी निजी विदेशी व्यापारिक कम्पनी के अधिकार में आ चुके थे। इनमें भारत में स्थित ईस्ट इंडिया कम्पनी, तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया की नीदरलैण्ड्स की डच ईस्ट इंडीज़ कम्पनी प्रमुख थीं। इन दोनों कम्पनियों को उनके सम्बद्ध देशों के राज्याध्यक्षों की ओर से अनुमति के रूप में चार्टर प्रदान किए गए थे। इन्हें व्यापार पर एकाधिकार प्राप्त था। भारत में जब 1858 में ईस्ट इंडिया कम्पनी से स्वयं ब्रिटिश सरकार (Crown) ने शासन के अधिकार ले लिए तब भी व्यवहार में कोई विशेष अंतर नहीं पड़ा। भारतीय उपमहाद्वीप में जिस विशाल प्रदेश पर ब्रिटिश शासन स्थापित हुआ उसको कम्पनी ने पहले ही फ्रांसीसी कम्पनी को युद्ध में पराजित करके, और विभिन्न भारतीय राजाओं को भी हरा कर, अपना नियन्त्रण स्थापित कर लिया था। ऐसा अठाहरवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हो चुका था। कर्नाटक के युद्ध तथा प्लासी की लड़ाई इसके बहुत अच्छे उदाहरण हैं। श्रीलंका में अंग्रेज़ों ने 1795 में डच लोगों के हाथों से सत्ता छीन ली थी। इसी प्रकार मलाया को अंग्रेजों ने पुर्तगालियों के हाथों से छीन लिया था। एशिया के इन सभी प्रदेशों में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना अफ्रीका से काफ़ी पहले हो गई थी।

8.2.3 अफ्रीका में उपनिवेशवाद और इसके लिए संघर्ष

अफ्रीका में इससे भिन्न स्थिति रही। इस महाद्वीप में उपनिवेशवाद देर से आया, परन्तु वह अत्यन्त शोषक एवं दमनकारी सिद्ध हुआ। सन् 1880 और 1900 की थोड़ी सी अवधि में केवल लाईबेरिया और इथयोपिया (अबीसीनिया) को छोड़कर शेष समस्त अफ्रीका पर, अनेक साम्राज्यवादी देशों, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम, पुर्तगाल, स्पेन और इटली; का अधिकार हो गया। इसको अफ्रीका का विभाजन, अथवा यूरोपीय देशों द्वारा व्यापार एवं प्रभाव क्षेत्र स्थापित करने के लिए संघर्ष (scramble) किया गया। सन् 1910 तक अनेक स्वतन्त्र देशों के स्थान पर, लगभग 40 कृत्रिम रूप से स्थापित उपनिवेश उभर कर आए थे। अफ्रीका में औपनिवेशिक व्यवस्था पूरी तरह स्थापित हो चुकी थी। सन् 1879 में फ्रांस ने अपने साम्राज्यवादी हितों की प्राप्ति के लिए ऊपरी सेनेगल में अपने प्रचारक और

कार्यकर्ता भेजे। बेल्जियम ने काँगो की तलहटी में इसी प्रकार प्रवेश करने के प्रयास किए। जर्मनी ने 1884 में टोगो तथा कैमरून में अपना ध्वज गाढ़ दिया। इन सब घटनाओं से ब्रिटेन को गम्भीर चिंता हुई, और उसने भी अफ्रीका के आन्तरिक भाग में प्रवेश करने की तैयारी आरम्भ कर दी। साम्राज्यवादी देशों के मध्य सशस्त्र संघर्ष को टालने के लिए जर्मन राजधानी बर्लिन में, प्रधानमन्त्री (चांस्लर) बिस्मार्क की अध्यक्षता में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ। स्विट्ज़रलैण्ड को छोड़कर, शेष सभी पश्चिमी यूरोपीय देशों ने बर्लिन सम्मेलन में भाग लिया। परन्तु, इसमें एक भी अफ्रीकी राज्य को आमन्त्रित नहीं किया गया। यह सम्मेलन 15 नवम्बर 1884 से 31 जनवरी 1885 तक चला। सभी साम्राज्यवादी देश चार बातों पर सहमत हुए। **प्रथम,** इससे पूर्व कि कोई भी साम्राज्यवादी देश किसी प्रदेश पर दावा या क़ब्ज़ा करे, वह इस (बर्लिन) समझौते के सभी हस्ताक्षरकर्ताओं को इसकी सूचना देगा, ताकि यदि कोई अन्य देश चाहे तो उस प्रदेश के लिए अपना दावा पेश कर सके। **द्वितीय**, इससे पूर्व कि किसी भी देश के दावे को वैध स्वीकार किया जाए, वह साम्राज्यवादी देश सम्बद्ध क्षेत्र को जीतकर उस पर अपना प्रभावी अधिकार स्थापित कर लेगा। **तृतीय**, अफ्रीकी शासकों के साथ सम्पन्न संधियों को संप्रभुता का वैध अधिकार पत्र माना जायगा। **चतुर्थ**, प्रत्येक साम्राज्यवादी देश अफ्रीका के तटवर्ती प्रदेशों से आगे बढ़कर महाद्वीप के अंदर अपना प्रभाव क्षेत्र स्थापित करेगा। इन सभी नियमों को बर्लिन अधिनियम (एक्ट) नामक दस्तावेज में शामिल किया गया। इसका 26 फरवरी 1885 को अनुमोदन हो गया। यह स्मरण रखना होगा कि बर्लिन सम्मेलन ने साम्राज्य स्थापना की होड़ आरम्भ नहीं की, वरन् जो होड़ चल रही थी उसको गति प्रदान की।

अफ्रीका में साम्राज्यवाद के लिए संघर्ष तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है। **प्रथम चरण में** प्रायः किसी अफ्रीकी शासक और यूरोपीय साम्राज्यवादी देश के मध्य संधि होती थी। इस संधि के द्वारा यूरोपीय देश उस अफ्रीकी देश को संरक्षण (Protection) प्रदान करता था, और बदले में वह स्थानीय शासक यह वचन देता था कि वह किसी अन्य यूरोपीय देश के साथ कोई संधि सम्बन्ध स्थापित नहीं करेगा। उधर सम्बद्ध यूरोपीय देश को कुछ एकाधिकारी व्यापारिक तथा अन्य अधिकार प्राप्त होते थे। अतः 1880 और 1895 के मध्य अंग्रेज़ों ने कई अफ्रीकी शासकों के साथ संधियाँ सम्पन्न कीं। इनमें कुछ अफ्रीकी देश थे घाना, योरूबालैण्ड तथा बेनिन। साथ ही ब्रिटेन ने असान्ते (Asante) के राजा को संरक्षण भी प्रदान किया। फ्रांस ने दहोमी के राजा और काँगो तलहटी क्षेत्र के शासकों के साथ संधियाँ की।

दूसरे चरण में, अनेक साम्राज्यवादी देशों ने आपस में संधियों पर हस्ताक्षर करके एक दूसरे के उपनिवेशों तथा प्रभाव क्षेत्रों को मान्यता प्रदान की, और आपसी सीमाएँ निर्धारित कीं। उदाहरण के लिए, ब्रिटिश-जर्मन संधि के द्वारा जर्मनी ने ब्रिटेन के दावों को स्वीकार करते हुए ज़ंज़ीबार, कीनिया, युगान्डा, उत्तरी रोडेशिया, बचुआनालैण्ड तथा पूर्वी नाईजीरिया पर ब्रिटिश वर्चस्व स्वीकार कर लिया। आँग्ल-फ्रांसीसी संधि के द्वारा अंग्रेज़ों ने मैडेगास्कर तथा नाईजीरिया की पश्चिमी सीमा को फ्रांसीसी प्रभाव के क्षेत्र के रूप में स्वीकार किया। सन् 1886 की फ्रांसीसी-पुर्तगाली संधि तथा 1891 की जर्मन-पुर्तगाली संधि के द्वारा अंगोला तथा मुज़ाम्बीक पर पुर्तगाली सम्प्रभुता को मान लिया, और मध्य अफ्रीका में ब्रिटेन के प्रभाव क्षेत्र का सीमा-निर्धारण भी किया। स्मरण रहे कि साम्राज्यवादी देशों ने इन संधियों पर हस्ताक्षर करते समय किसी भी अफ्रीकी राज्य से परामर्श नहीं किया। **तीसरा चरण** युद्ध में विजय और क़ब्ज़ा करने का था। यद्यपि यूरोपीय लोगों ने इस चरण को 'शांतिवाद' का नाम दिया, परन्तु व्यवहार में अफ्रीकी दृष्टिकोण से यह सर्वाधिक पाशविक शक्ति-प्रदर्शन का समय था। अतः 1885 से फ्रांस ने पश्चिमी सूडान पर आक्रमण करके

उस पर क़ब्ज़ा करने की प्रक्रिया आरम्भ की, ब्रिटेन ने 1896 में असान्ते पर, 1892 में इजीबू पर, 1897 में बेनिन पर, तथा 1896-1899 में सूडान पर क़ब्ज़ा कर लिया। जर्मनी ने 1888 और 1907 में पूर्वी अफ्रीका को अपने स्वामित्त्व में ले लिया। अफ्रीकी शासकों ने उन संधियों का स्वागत किया जिनपर उनके साथ यूरोपीय देशों ने हस्ताक्षर किए थे, फिर भी उन्होंने अपने ऊपर अप्रत्याशित विदेशी क़ब्ज़े का विरोध किया।

अफ्रीकी शासकों ने तीन उपाय किए: पराधीनता स्वीकार करना, संधि-समझौते करना, तथा संघर्षात्मक मुकाबला करना। अंतिम मार्ग लगभग सभी अफ्रीकी राज्यों ने अपनाया; परन्तु उन्होंने ऐसा तब किया जबकि अन्य विकल्प विफल हो गए। कोइ भी अफ्रीकी राज्य आर्थिक और सैनिक दृष्टि से इतना शक्तिशाली नहीं था कि वह यूरोपीय देशों का सामना कर सकता। केवल इथयोपिया इसका अपवाद सिद्ध हुआ, क्योंकि उसने इटली को 1898 में पराजित कर दिया। परन्तु, उसकी पराजय भी कभी न कभी निश्चित थी। इसके साथ ही अफ्रीका में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना हुई।

8.2.4 लैटिन अमेरिका में औपनिवेशिक राज्य

लैटिन अमेरिका का अनुभव एशिया और अफ्रीका दोनों से ही भिन्न था। उसका उल्लेख तो अलग से करना होगा। उस महाद्वीप में सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ से उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक औपनिवेशिक युग पाया गया, यद्यपि दो प्रमुख आक्रामक साम्राज्यवादियों, स्पेन तथा पुतर्गाल के आक्रामकों ने इस क्षेत्र पर क़ब्ज़ा करने के लिए बल प्रयोग किया, अनेक स्थानीय लोगों की हत्या की, अथवा उन्हें बागानों और खानों में कार्य करने के लिए दास बना लिया। बड़ी संख्या में दासों को अफ्रीका से भी लाया गया।

एशिया और अफ्रीका के विपरीत, स्पेन, पुर्तगाल तथा इटली से आए यूरोपवासी बड़ी संख्या में लैटिन अमेरिकी देशों में जाकर बस गए। परिणामस्वरूप उन देशों में आज भी यूरोपीय मूल के लोग बड़ी संख्या में पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, आप्रवास के कारण अर्जेन्टीना में तो, वहाँ की जनसंख्या में, लगभग 90 प्रतिशत यूरोपीय मूल के श्वेत लोग पाए जाते हैं। पुर्तगाल ने ब्राज़ील को अपने क़ब्ज़े में ले लिया। शेष लैटिन अमेरिका पर स्पेन का अधिकार हो गया था। लैटिन अमेरिका में उपनिवेशवाद, औद्योगिक क्रान्ति से बहुत पहले स्थापित हो गया था। इसीलिए, वहाँ कृषि फ़ार्मों (जिन्हें Latifundia कहते थे) तथा खानों (mines) को मुख्य कार्य क्षेत्र बनाया गया। इन्हीं से शासक देश बड़ी मात्रा में कच्चा माल स्वदेश भेजने लगे। परिणाम यह हुआ कि मूल वस्तुओं पर आधारित निर्यात इस प्रदेश में औपनिवेशिक युग की प्रमुख आर्थिक गतिविधि बनी।

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) औपनिवेशिक राज्य की स्थापना में सहायक तत्त्वों की पहचान कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) एशियाई देश किस प्रकार यूरोपीय शासन के अधीन आ गए?

.....

.....

.....

.....

.....

3) अफ्रीका के लिए संघर्ष का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4) बर्लिन समझौते, 1885 के चार प्रमुख निर्णयों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

8.3 औपनिवेशिक राज्य की विशेषताएँ तथा उसके कार्य

औपनिवेशिक राज्य की कुछ विशेषताएँ थीं, जो कि यूरोपीय राज्यों से तो भिन्न थी हीं, वे वर्तमान् विकासशील देशों के उत्तर-औपनिवेशिक राज्यों से भी भिन्न थीं। **प्रथम**, यह राज्य स्थानीय जनता को नियन्त्रित करने और उसका दमन करने का साधन था। इस उद्देश्य के लिए उन्होंने शक्तिशाली केन्द्रीकृत आधुनिक नौकरशाही की स्थापना की थी। कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए सशक्त पुलिस बल तथा सेना की व्यवस्था भी थी। अतः, यूरोप के विपरीत, यह अधिनायकवादी राज्य था, न कि उदार लोकतान्त्रिक राज्य। **द्वितीय**, औपनिवेशिक राज्य से यह अपेक्षा थी कि वह यूरोपीय औपनिवेशिक शासकों के, तथा उनकी जनता के, आर्थिक और राजनीतिक हितों की रक्षा करेगा। **तृतीय**, औपनिवेशिक शासकों को इस बात का आत्म-विश्वास था कि उनका कार्य स्थानीय लोगों को सभ्य बनाना (civilising mission), तथा अपनी संस्कृति और अपने मूल्यों को उपनिवेशों में स्थापित करना था। अतः, वे उपनिवेशवाद को "श्वेत मनुष्य के बोझ" के रूप में प्रदर्शित करते थे।

औपनिवेशिक राज्य की भूमिका को ठीक से समझने के लिए यह आवश्यक है कि सभी उपनिवेशों में सामान्यतया देखे गए दो चरणों में विभाजित किया जाए। इन चरणों का

सम्बन्ध विश्व अर्थव्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों से था। यह चरण थे: (1) उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से 1920 तक का समय जब अपनी स्थिति को शासकों ने मज़बूत किया; तथा (2) दूसरा चरण प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति से लेकर द्वितीय विश्व युद्ध के उपरांत उपनिवेशवाद उन्मूलन के समय तक चला, जब उपनिवेशवाद का धीरे-धीरे ह्रास हुआ। प्रथम चरण में शक्तिशाली औपनिवेशिक राज्य की स्थापना हुई जब शासकों के हितों की वृद्धि के लिए नीतियाँ बनाई गईं। इसको "उपनिवेशवाद का स्वर्णिम युग" कहा गया, क्योंकि कच्चे माल की माँग और मूल्य दोनों ही उच्च स्तर पर थे। इसका कारण यह था कि यूरोप का एक के बाद एक देश औद्योगीकरण के मार्ग पर चल निकला था। उपनिवेशों में आवश्यक कच्चे माल का उत्पादन होता था। कुछ उपनिवेशों में "मुनाफ़े के विभाजन" की नीति अपनाई गई, अर्थात् कच्चे माल के निर्यात से स्थानीय मूल निवासियों को भी पर्याप्त लाभ हुआ, यद्यपि यह स्थानीय समाज के उस छोटे वर्ग तक ही सीमित रहा जिसके पास भूमि का स्वामित्त्व था, तथा जो कच्चे माल के उत्पादन और वितरण (marketing) में लगा था। उदाहरण के लिए, भारत में कपास और गन्ने की खेती करने वाले, घाना में कोको के उत्पादक, आईवरी कोस्ट में मूँगफली की खेती में लगे कृषक, ब्राज़ील में कॉफी के उत्पादक; अथवा इन्डोनेशिया में चावल (धान) की पैदावार करने वाले मुनाफ़ा कमाने वालों की श्रेणी में आते थे। उपरोक्त वर्णित वस्तुओं को, जिन्हें 'नकद फ़सल' या अँग्रेज़ी में cash crops कहते हैं, जिनका उत्पादन उस समय निर्यात करके धन (cash) कमाने के लिए किया जाता था। अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में उनका अच्छा मूल्य मिलता था।

मुनाफ़ा (लाभ) कमाते रहने के लिए औपनिवेशिक राज्य ने कई कानून व्यवस्था तथा भूमि नियम अपनाए। उनका उद्देश्य अधिक से अधिक राजस्व कमाना था। भारत में स्थापित ज़मींदारी तथा रैयतवारी भूमि व्यवस्थाएँ इस बात का उत्तम उदाहरण है। उपनिवेशों के द्वार खोलकर अधिक लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से औपनिवेशिक राज्यों ने रेलवे, बन्दरगाहों, सड़कों इत्यादि के निर्माण में पूँजी निवेश किया। अर्थव्यवस्था को और अधिक मुद्रा - आधारित बना कर, ऐसे श्रमिक वर्ग के विकास का प्रयास किया गया जो खानों और बाग़ानों (Planation) में काम करने के लिए प्रस्तुत था। इस कार्य के लिए जो नीतियाँ अपनाई गई, उसमें अफ्रीका के कुछ भागों में प्रत्येक व्यक्ति पर "झोपड़ी कर" (Hut tax) लगाना शामिल था। भारत में नक़द भूमि राजस्व वसूल करने के लिए नियम बनाए गए, जिसने स्थानीय निवासियों को (अपना उत्पादन करने की अपेक्षा) वह कार्य करने के लिए प्रेरित किया जिसमें उन्हें नक़द पारिश्रमिक मिले। यह उपाय इसलिए आवश्यक समझे गए ताकि औपनिवेशिक व्यवस्था का अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में एकीकरण किया जा सके, और औपनिवेशिक शासकों की पूँजीवादी संरचना सुदृढ़ हो सके।

ए.जी. फ्रैंक तथा **अमीय कुमार बाग्ची** जैसे विद्वानों ने तर्क दिया है कि औपनिवेशिक राज्य की आर्थिक नीतियों ने विकास की गति को अवरुद्ध किया और औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था को पिछड़ा रूप दिया। यह पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी था। इन नीतियों का फल यह हुआ कि उपनिवेश, मात्र कच्चे माल के निर्यात और उस की आपूर्ति करने वाले बन कर रह गए। इन्होंने यूरोप के तेज़ी से विकासशील उद्योगें को कच्चे माल की आपूर्ति की। विकास की गति को अवरुद्ध करने का आशय यह है कि इन देशों के विकास की सामान्य प्रक्रिया में रुकावटें आईं, औपनिवेशिक राज्य के हस्तक्षेप से प्रगति रुक गई, क्योंकि शासक देशों ने अपने हित में ही नीतियाँ बनाईं और उनका क्रियान्वयन किया। उदाहरण के लिए, उपनिवेशों में जिस अवसंरचना की व्यवस्था की गई, वह अपर्याप्त थी, और सभी उपनिवेशों में एक समान नहीं थी। रेलों और सड़कों का विकास इसलिए किया गया था ताकि निर्यात के लिए कच्चे माल को समुद्र तट तक आसानी से पहुँचाया जा सके; इसलिए नहीं कि

अर्थव्यवस्था के सभी भागों को विकास के लिए एक साथ जोड़ा जा सके। इसी प्रकार इस बात पर बल दिया गया कि जीवन निर्वाह की वस्तुओं की नहीं अपने व्यापार के लिए उपयोगी कृषि उत्पाद को बढ़ावा दिया जाए, ताकि निर्यात के लिए जिन वस्तुओं की आवश्यकता थी उनकी ही उपज की जा सके। परिणाम यह हुआ कि कृषि में एकल-संस्कृति (monoculture) का जन्म हुआ, अर्थात् एक ही फ़सल की, निर्यात के लिए, उपज की गई। इस पर जो आर्थिक निर्भरता पनपी वह उत्तर-औपनिवेशिक युग में भी जारी रही। उदाहरण के लिए घाना में कोको तथा युगांडा में कपास के उत्पादन पर ही बल दिया जाता रहा। अर्थव्यवस्था में विविधता के लिए प्रयास नहीं किया गया, वरन् निर्यात-आधारित फसलों ने अन्तर्राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा किया; राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं की अवहेलना की गई। इसके फलस्वरूप हर जगह असमान क्षेत्रीय विकास हुआ, जो कि उत्तर औपनिवेशिक समय में राष्ट्र-निर्माण के मार्ग में प्रमुख बाधक सिद्ध हुआ।

औपनिवेशिक व्यवस्था ने औद्योगिक तथा प्रौद्योगिकी विकास में भी विलम्ब किया, क्योंकि औपनिवेशिक शासक यह कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते थे कि उनके अपने देशों में बने माल के साथ कोई स्थानीय उत्पाद मुक़ाबला करे। परिणाम यह हुआ कि कुछ उपनिवेशों में तो औद्योगीकरण का ह्रास (de-industrialisation) हुआ, या उसमें कमी आई। अर्थात्, यूरोपीय मशीनों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के मूल्य कम होने के कारण स्थानीय उद्योगों को इतनी हानि हुई कि वे बन्द होने लग गए। स्थानीय उद्योग स्थापित करने की अनुमति देने से इन्कार करके, यूरोपीय उद्योग को संरक्षण प्रदान किया गया। परन्तु, यह भी ठीक है कि उपनिवेशवाद के मिश्रित परिणाम हुए। उसके कुछ लाभों (benefits) का उल्लेख करना आवश्यक है। यूरोपीय देशों ने अपने (एशियाई-अफ्रीकी) उपनिवेशों में पाश्चात्य शिक्षा आरम्भ की। इसका मूल उद्देश्य ऐसे शिक्षित वर्ग की उत्पत्ति करना था जो कि उपनिवेशों में शासन कार्य में सहायक हो सकें। कुछ अन्य लाभदायक परिणाम थेः शहरीकरण, यातायात एवं संचार व्यवस्था का विकास, सिंचाई परियोजनाएँ, आधुनिक प्रौद्योगिकी, रोज़गार के अवसर, सामाजिक सुधार, धीरे-धीरे स्वशासन की स्थापना तथा समाज में एक मध्यम वर्ग का विकास। इनमें से कुछ उपाय (जैसे प्रौद्योगिकी विकास) तो बहुत सीमित रूप से किए गए।

जैसा कि ऊपर भी उल्लेख किया गया है, उपनिवेशवाद प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। उसके पश्चात् इसका ह्रास होना आरम्भ हुआ। इस ह्रास के कारणों में प्रमुख थेः अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में परिवर्तन, यूरोप में उपनिवेशवाद की अस्वीकृति, तथा उपनिवेशों में स्वतन्त्रता की माँग करने वाले राष्ट्रीय आन्दोलनों का उदय। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् कच्चे माल की माँग कम होने के साथ-साथ उनके मूल्यों में भी गिरावट आई। उपनिवेशों में पूँजी निवेश की सम्भावना में भी कमी आई। अतः उपनिवेशवाद अब पहले जैसा उपयोगी नहीं रह गया। 1930 के दशक के आर्थिक संकट तथा द्वितीय विश्व युद्ध दोनों ने साम्राज्यवादी शक्तियों को और भी कमज़ोर कर दिया। इस द्वितीय चरण में औपनिवेशिक राज्य ने अपनी व्यवस्था को बनाए रखने के प्रयास किए ताकि अन्ततः सत्ता को स्थानीय जनता को हस्तांतरित किया जा सकता।

यद्यपि सभी लैटिन अमरीकी राज्य उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में स्वतन्त्र हो गए थे, फिर भी उनको कई समान अनुभव हुए। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उनमें से अनेक ब्रिटेन के नव-उपनिवेश बन गए। यह स्थिति प्रथम विश्व युद्ध के आरम्भ तक चली। उसके पश्चात्, द्वितीय विश्व युद्ध तक वे संयुक्त राज्य के नव-उपनिवेशवादी नियन्त्रण में रहें। नवोदित उत्तर-औपनिवेशिक राज्यों द्वारा अपनाई गई नीतियों का लाभ उनको भी प्राप्त हुआ। अधिनायकवादी राज्यों की स्थापना हुई, निर्यात-सम्बन्धित विकास चलता रहा, तथा औद्योगीकरण

में, बीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक, विलम्ब हुआ। इस विलम्ब के लिए उनके शासक वर्ग उत्तरदायी थे, जिन्होंने राजनीति और अर्थ-व्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किए। इसीलिए लैटिन अमेरिका को आज भी विकासशील देशों में गिना जाता है, और उनकी अनेक विशेषताएँ अन्य विकासशील देशों जैसी हैं।

बोध प्रश्न 2

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) औपनिवेशिक राज्य की प्रमुख विशेषताएँ तथा उनके कार्य क्या थे?

.....

.....

.....

.....

.....

2) एशिया और अफ्रीका को उपनिवेशवाद से हुए लाभ का संक्षिप्त उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.4 उपनिवेशवाद के प्रतिमान, या नमूने

विभिन्न यूरोपीय देशों की औपनिवेशिक नीतियों में गहरे अंतर थे। अतः यह आवश्यक है कि कम से कम चार अलग-अलग प्रतिमानों का उल्लेख किया जाए। उपनिवेशवाद के यह चार नमूने थेः ब्रिटिश, फ्रांसीसी, बेल्जियन तथा पुर्तगाली प्रतिमान।

8.4.1 ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति

ब्रिटेन ने जो औपनिवेशिक नीति अपनाई उसके अनुसार उसके उपनिवेशों को स्वयं ब्रिटेन का भाग नहीं बनाया गया। उपनिवेशों की सभ्यताओं तथा मूल्यों को सामान्यतया वैसा ही रहने दिया गया। साथ ही उनके अधिकतम स्वायत्त विकास के लिए उन्हें सुविधाएँ दी गईं। औपनिवेशिक शासकों (ब्रिटेन) तथा उपनिवेशों की स्थानीय जनता की "उपनिवेशवाद के लाभांश" में अच्छी भागीदारी रही। धीरे-धीरे, समय के साथ-साथ उपनिवेशों को अपनी सरकारों के संचालन में अधिक भागीदारी दी गई, तथा उनसे संबंधित मामलों में उनके विचारों को महत्व दिया गया। ऐसा ब्रिटिश संसद द्वारा पारित विभिन्न कानूनों के माध्यम से किया गया उदाहरण के लिए, जैसे कि भारतीय परिषद् अधिनियम 1892 तथा 1909 इत्यादि। इसका परिणाम यह हुआ कि पारम्परिक मूल्यों और जीवन शैली को भंग नहीं, उनका सम्मान किया गया। भारत, श्रीलंका, मलाया जैसे देशों में ब्रिटेन ने काफ़ी पूँजी

निवेश किया। ब्रिटेन में चालीस के दशक में लेबर पार्टी के सत्तारूढ़ होने पर यह विश्वास किया जाने लगा कि औपनिवेशिक शासन का यह उत्तरदायित्त्व था कि स्थानीय लोगों का कल्याण किया जाए। यह भी स्वीकार किया गया कि उपनिवेशवाद को तेज़ी से समाप्त करना होगा।

8.4.2 फ्रांसीसी उपनिवेशवाद

ब्रिटिश नीति के विपरीत, फ्रांस की औपनिवेशिक नीति का आधार था कि उपनिवेशों का आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सभांगीकरण (assimilation) किया जाए। इसका अर्थ हुआ कि फ्रांसीसी उपनिवेशों, विशेषकर अफ्रीका स्थित उपनिवेशों, को मातृ देश (फ्रांस) का अभिन्न अंग माना जाए। उदाहरण के लिए, उपनिवेशों के नेतागण फ्रांस की संसद के निचले सदन, राष्ट्रीय सभा (National Assembly) के लिए चुनाव लड़ सकते थे। शायद इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण होगा आईवरी कोस्ट का **हम्फरी बोइग्नी** (Humphrey Boigny) जो कि फ्रांस के साम्यवादी दल का सदस्य था। पारम्परिक संस्कृति में परिवर्तन लाने की चेष्टा की गई। फ्रांस, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद भी अपने उपनिवेशों में निवेश करता रहा। फ्रांस इस विचार को स्वीकार ही नहीं कर सका कि उपनिवेशवाद का उन्मूलन होना चाहिए। उसको यह अनुभव पहली बार 1958 की अल्जीरिया की क्रान्ति (विद्रोह) के समय ही हुआ। फिर भी फ्रांस ने उन देशों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध बनाए रखे, अपने पूर्व उपनिवेशों को वह सहायता देता रहा, जिसके कारण उनके अन्य अफ्रीकी पड़ोसियों ने उन्हें फ्रांस के 'नव-उपनिवेश' कहना आरम्भ कर दिया। फिर भी फ्रांसीसी उपनिवेशवाद इस अर्थ में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के समान था कि उसने अलग शासन बनाए रखने के लिए बल प्रयोग नहीं किया। हमारे अन्य दो प्रतिमान बल प्रयोग पर आधारित थे।

8.4.3 पुर्तगाली उपनिवेशवाद

एक प्रकार से, पुर्तगाली उपनिवेशवाद सबसे अलग प्रकृति का था। इसका आधार बल का अत्यधिक प्रयोग था। यहीं नहीं, वह जाति भेद में भी विश्वास रखता था। यह सबसे पुरानी औपनिवेशिक शक्ति थी, और यह (पुर्तगाल) 1975 तक अपने कुछ उपनिवेशों के साथ चिपका रहा। उससे बहुत पहले अन्य यूरोपीय देश अपने उपनिवेश छोड़कर जा चुके थे। हाँ, लैटिन अमेरिका में इसको अपना मूल्यवान उपनिवेश, अर्थात् ब्राज़ील, बहुत पहले ही छोड़ देना पड़ा था। पुर्तगाल ने अपने तथाकथित "असभ्य मूल निवासियों" के मध्य से "सभ्य" लोगों के एक छोटे वर्ग का निर्माण किया था। इस "सभ्य वर्ग" की सहायता से वह अपने उपनिवेशों पर दीर्घ काल तक शासन करता रहा। उपनिवेशों की बहुत बड़ी जनसंख्या अशिक्षित और आधुनिकता से अछूती रही। उनको मूल रूप से भूमि पर, कारख़ानों या ख़ानों में श्रमिकों के रूप में कार्य करने के लिए प्रशिक्षित किया गया था। अच्छी नौकरी की आशा से कुछ पुर्तगाली श्रमिकों ने आप्रवास करके उपनिवेशों में बस जाने का निर्णय किया था। बहुधा इन पुर्तगाली श्रमिकों तथा स्थानीय श्रमिकों में मुक़ाबले, और कभी-कभी हिंसक संघर्ष भी होते रहते थे। यह तो 1961 के अंगोला के विद्रोह जैसी घटनाओं के बाद ही निश्चय किया गया कि सुधार लागू किए जाएँ। साथ ही स्वशासन की दिशा में भी कुछ क़दम उठाए गए।

यद्यपि उपनिवेशों में निवेश अवश्य किया गए, परन्तु इसका लाभ शायद ही उपनिवेशों के लोगों को मिला हो। इसका एक मूल कारण यह था कि स्वयं पुर्तगाल, यूरोप में, प्रौद्योगिकी की दृष्टि से पिछड़ा हुआ रहा। इसलिए भी उसको अपने उपनिवेशों पर प्रत्यक्ष और दमनकारी बल प्रयोग करके शासन करना पड़ा, ताकि कहीं उसके उपनिवेश अंग्रेज़ी या फ्रांसीसी क़ब्ज़े में न चले जाएँ। पुर्तगाल की अपनी सरकार तानाशाही थी, तथा देश

स्वयं अपनी निर्धनता तथा निरक्षरता की समस्याओं का सामना करने में असमर्थ था। अनेक विद्वानों का मत है कि पुर्तगाल और स्पेन ने लैटिन अमेरिका के देशों को अधिनायकवाद की भेट दी थी। यह आज भी स्पष्ट है, क्योंकि लैटिन अमरिकी महाद्वीप में लोकतन्त्र का अभाव है, और समय-समय पर उनमें से अनेक देशों में सैनिक क्रान्तियाँ होती रहती हैं।

8.4.4 बेल्जियम की औपनिवेशिक नीति

बेल्जियम की नीति मध्यममार्गी थी। बेल्जियम ने अपने उपनिवेशों में शक्तिशाली पैतृक और केन्द्रीकृत प्रशासन की स्थापना की थी। इसका नियन्त्रण प्रत्यक्ष रूप से बेल्जियम की सरकार ने अपने हाथों में रखा था। परन्तु, बेल्जियन काँगो में औपनिवेशिक सरकार की सहायता वे निजी बेल्जियन कम्पनियाँ किया करती थी जिन्हें प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग का अधिकार दिया गया था। चर्च भी प्रशासन की सहायता करता था। चर्च की स्थिति वहाँ काफ़ी मज़बूत थी। ब्रिटेन के विपरीत, बेल्जियम ने स्थानीय लोगों की स्वशासन में कोई भाग नहीं दिया। बेल्जियम ने फ्रांस की तरह सांस्कृतिक समांगीकरण का प्रयास भी नहीं किया। चाहे, काँगो का तेज़ी से आधुनिकीकरण हुआ और अवसंरचना (infrastructure) तथा खदान क्षेत्र में पर्याप्त निवेश भी हुआ, फिर भी शिक्षा पर, तथा जनजीवन के सुधार पर बहुत ही कम व्यय किया गया। सामान्य व्यक्ति निर्धन और पिछड़ा हुआ रहा, तथा (ब्रिटिश एवं फ्रांसीसी उपनिवेशों की भांति) यहाँ किसी शिक्षित मध्यम वर्ग का उदय भी नहीं हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि जब अचानक काँगो पर बेल्जियम का शासन समाप्त हो गया उस समय वहाँ पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित अधिकारी थे ही नहीं जो कि देश के प्रशासन की बागडोर सम्भाल सकते। इसने काँगो के लिए अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न कर दीं।

बोध प्रश्न 3

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) फ्रांस के समांगीकरण के प्रतिमान का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) पुर्तगाली उपनिवेशवाद की क्या विशेषताएँ थीं?

.....

.....

.....

.....

.....

8.5 साराश

औपनिवेशिक राज्य, विस्तारवादी विश्व पूँजीवादी व्यवस्था के, ऐतिहासिक विकास का परिणाम था। इसने यूरोप में औद्योगिक पूँजीवाद को, तथा ग़ैर-यूरोपीय विश्व में उपनिवेशवाद का आधार व्यापार था। परन्तु, मशीनीकरण से उत्पादित वस्तुओं के साथ-साथ औपचारिक औपनिवेशिक संरचना की स्थापना हुई।

यह राज्य, यूरोपीय राज्यों से भिन्न थे। इनकी विशेषता थी शक्तिशाली, केन्द्रीकृत तथा अधिनायकवादी व्यवस्था। स्थानीय लोगों की भागीदारी लगभग न होने के बराबर थी। इसमे औपनिवेशिक शासकों के हितों की रक्षा पर ही बल दिया जाता था।

विभिन्न उपनिवेशों में, अलग-अलग तरीक़ों से औपनिवेशिक राज्य की स्थापना हुई, परन्तु सभी स्थानों पर यह विजय (Conquest) तथा स्थानीय लोगों की पराधीनता पर आधारित था। एशिया में इसका आरम्भ निजी, मान्यता प्राप्त (Charter) कम्पनियों के द्वारा किया गया। अफ़्रीका में यूरोपीय देशों ने अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र और उपनिवेश आपस में निर्धारित कर लिए। अपना दावा सिद्ध करने के लिए उन्होंने बल प्रयोग किया। लैटिन अमेरिका में इसकी स्थापना स्पेन और पुर्तगाल द्वारा युद्ध में, अपने राजाओं के नाम पर, विजय प्राप्त करके की गई।

औपनिवेशिक राज्य की नीतियों ने आर्थिक क्षेत्र में विकास की गति को कम करके पिछड़ेपन को समर्थन दिया। स्थानीय लोगों का दमन किया गया, तथा उनके हितों और उनकी माँगों को दबाया गया। उपनिवेशवाद से कुछ सीमित लाभ भी हुए, जैसे शिक्षा, रोज़गार, शहरीकरण, अवसंरचना-व्यवसा, यातायात, संचार तथा नई प्रौद्योगिकी इत्यादि। परन्तु सभी उपनिवेशों में एक जैसा प्रभाव नहीं पड़ा।

उपनिवेशवाद के चार प्रतिमानों की पहचान की जाती है। वे हैं: ब्रिटिश, फ्रांसीसी, पुर्तगाली और बेल्जियन प्रतिमान। पहले दो खुलकर दमन करने वाले नहीं थे और उन्होंने विकास एवं स्वशासन के लिए कुछ प्रभावी उपाय भी किए। परन्तु पुर्तगाली और बेल्जियन व्यवस्थाएँ अत्याचार एवं बल प्रयोग पर आधारित थी; वे अधिक से अधिक लाभ की लालसा रखती थीं और उन्हें मूल निवासियों के हितों एवं भावनाओं की कोई चिंता नहीं थी।

8.6 शब्दावली

नव-उपनिवेशवाद : इस शब्द का प्रयोग उस नई व्यवस्था के लिए किया जो अप्रत्यक्ष शोषण और आर्थिक दासता का संकेत देती है। पूर्व औपनिवेशिक देशों, या कुछ अन्य विकसित देशों द्वारा पूर्व उपनिवेशों तथा विकासशील देशों पर असमान व्यापार, सरकार में हस्तक्षेप तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों आदि के माध्यम से अपना आर्थिक और राजनीतिक नियन्त्रण बनाए रखना।

समुद्री डाका : इस शब्द का प्रयोग खुले सागर में जहाज़ों पर डाका डालने के अर्थ में किया जाता है। नागरिक विमानन से यात्रा की प्रथा आरम्भ होने से पूर्व अधिकांश व्यक्ति एक देश से दूसरे

को जहाज़ों से यात्रा करते थे। सामान भी समुद्री मार्ग से जाता था। जब कुछ डाकू किसी जहाज़ पर डाका डालते और लूट मार करते थे तब उन्हें समुद्री डाकू, और उस प्रक्रिया को समुद्री डाका कहा जाता था।

8.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Michael Barrat Brown *After Imperialism*

Burnwall *Colonial Policy and Practice*

Bipin Chandra *National and Colonialism in India*

A. Adu Boahen *African Perspectives on Colonialism*

B. Suteliffe and R. Owen *Studies in the Theory of Imperialism*, Longinan, London, *1972.*

L.H. Gann and Peter Duignan *Colonialism in Africa 1870-1960*, Vol.2, *The History and Politics of Colonialism 1914-1960,* CUP, 1970

Frank A.G. *Capitalism and Underdevelopment in Latin America Historical Studies of Brazil and Chile*, New York, *1969.*

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) उपनिवेशवाद और औपनिवेशिक राज्य विश्व पूँजीवाद के ऐतिहासिक विकास का परिणाम थे। पन्द्रहवीं शताब्दी में आरम्भ उपनिवेशवाद युद्ध में विजय पर आधारित था। औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् इसका एशिया, अफ्रीका में विस्तार हुआ। उपनिवेशों से सस्ता कच्चा माल लिया जाता था, तथा उनका आर्थिक शोषण होता था। *(कृपया विस्तृत विवरण के लिए भाग 8.2 देखें।)*

2) यह प्रक्रिया यूरोपीय देशों द्वारा अपने पैर जमाने के साथ आरम्भ हुई। ब्रिटिश सरकार द्वारा दिए गए चार्टर पर आधारित ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारत के अनेक प्रदेशों पर नियन्त्रण कर लिया। ब्रिटिश महारानी ने 1858 में, प्रत्यक्ष रूप से भारत पर शासन करना आरम्भ कर दिया। डच कम्पनी को श्रीलंका में अंग्रेज़ों ने पराजित किया, और भारत में फ्रांस को हराया। *(कृपया विस्तृत विवरण के लिए उपभाग 8.2.2 देखें।)*

3) अफ्रीका का अधिकांश भाग उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम 20 वर्षों में अंग्रेज़ी, फ्रांसीसी, जर्मन या बेल्जियन शासन के अधीन आ गया। उपनिवेशवाद के लिए संघर्ष का परिणाम हुआ कीनिया, ज़ंज़ीबार, उत्तरी रोडेशिया, युगांडा इत्यादि पर ब्रिटिश शासन; मैड़ेगास्कर और उत्तरी अफ्रीका पर फ्रांस का शासन; काँगो पर बेल्जियम का तथा पूर्वी एवं दक्षिण-पश्चिमी अफ्रीका पर जर्मनी के उप्रनिवेश स्थापित हुए। *(कृपया विस्तृत विवरण के लिए उपभाग 8.2.3 देखें।)*

4) (1) जो देश अपने उपनिवेश स्थापित करना चाहता था वह अन्य हस्ताक्षरकर्ताओं को इसकी सूचना दे; (ख) सभी दावों को वास्तविक प्रभाव में लाने के लिए विजय और नियन्त्रण; (ग) स्थानीय शासकों के साथ सम्पन्न संधियाँ वैध होंगी; तथा (घ) प्रत्येक

औपनिवेशिक शक्ति अपने क्षेत्र तटों से अंदर की ओर मुख्य महाद्वीप में ले जाएगी। *(कृपया विस्तृत विवरण के लिए उपभाग 8.2.2 देखें।)*

बोध प्रश्न 2

1) औपनिवेशिक राज्य का मुख्य कार्य शासकों के हितों की रक्षा करना था, न कि मूल निवासियों की। उपनिवेशों से शासकों के हित में नियति करवाना उनका शोषण करना और स्थानीय जनता का दमन करना। आधुनिक नौकरशाही की संरचना पर आधारित यह राज्य तानाशाही था, जिसने स्थानीय उद्योगों को नष्ट किया। (कृपया विस्तृत विवरण के लिए भाग 8.3 देखें।)

2) जो लाभ हुए उनमें से कुछ थे: पाश्चात्य शिक्षा, शहरीकरण, यातायात के साधनों और संचार व्यवस्था का विकास, सिंचाई तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी। (कृपया विस्तृत विवरण के लिए भाग 8.3 देखें।)

बोध प्रश्न 3

1) उपनिवेशों को राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक रूप से फ्रांस के अंग बनाने का प्रयास किया गया। उपनिवेशों के राजनीतिक नेता फ्रांस की संसद के लिए चुनाव लड़ सकते थे। (कृपया विस्तृत विवरण के लिए उपभाग 8.4.2 देखें।)

2) पुर्तगालियों ने सामान्यतया बल प्रयोग किया। ऐसा विशेषकर लैटिन अमेरिका में मूल निवासियों को "सभ्य" बनाने के प्रयास में किया गया। पुर्तगाली उपनिवेशों के अधिकांश मूल निवासी निरक्षर और आधुनिकता से वंचित रहे। पुर्तगाल स्वयं प्रौद्योगिकी की दृष्टि से पिछड़ा हुआ, तानाशाही शासन वाला देश रहा। (कृपया विस्तृत विवरण के लिए उपभाग 8.4.3 देखें।)